# ARTS COLLEGE,
# RAJAMAHENDRAVARAM

**1st Semester**

**Study material**

**डॉ. के. गौतम**

हिन्दी विभाग,

शासकीय महाविध्यालय, राजमहेंद्रवरम

# मित्रता - आचार्य रामचंद्र शुक्ल

## ➢ आचार्य रामचंद्र शुक्ल का परिचय

आचार्य रामचंद्र शुक्ल का जन्म 4 अक्टूबर, 1884 को उत्तर प्रदेश के बस्ती ज़िले के अगौना नामक गाँव में हुआ था। आरंभिक शिक्षा मिर्ज़ापुर में हुई, फिर कायस्थ पाठशाला प्रयाग से इंटर किया। आगे फिर उन्होंने स्वाध्याय से ज्ञान अर्जन किया और इस क्रम में उर्दू, अँग्रेज़ी, बांग्ला और हिंदी भाषा एवं साहित्य का गंभीर अध्ययन किया। मिर्ज़ापुर में ही वह भारतेंदु युग के महत्त्वपूर्ण रचनाकार चौधरी बदरीनारायण प्रेमघन के संपर्क में आए और 'आनंद कादंबिनी' पत्रिका के संपादन में उनका सहयोग किया। इस कार्य से उनमें साहित्य और संपादन की समझ तो विकसित हुई ही, वह भारतेंदु युग के साहित्य और समकालीन साहित्य-कर्म से भी परिचित हुए। इस दौरान उनका साहित्य लेखन भी आरंभ हो चुका था। वह ब्रज भाषा और खड़ी हिंदी में कविता-लेखन करते रहे थे। 'कविता क्या है' निबंध का प्रारंभिक रूप इसी अवधि में 'सरस्वती' में प्रकाशित हुआ। 1903 में उनकी कहानी 'ग्यारह वर्ष का समय' भी प्रकाशित हो चुकी थी।

सन् 1908 में आचार्य रामचंद्र शुक्ल मिर्ज़ापुर से काशी आ गए जहाँ काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा तैयार किए जा रहे 'हिंदी शब्द सागर' से सहायक संपादक के रूप में जुड़े। इस कोश के प्रधान संपादक बाबू श्यामसुंदर दास थे। सन् 1927 में इस कोश का कार्य पूरा हुआ जिसकी लंबी भूमिका आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखी। यही भूमिका बाद में परिवर्तित रूप में 'हिंदी साहित्य का इतिहास' के रूप में प्रकाशित हुई।

सन् 1919 में रामचंद्र शुक्ल काशी हिंदू विश्वविद्यालय के प्रध्यापक भी नियुक्त हो चुके थे। सन् 1937 में श्यामसुंदर दास के निधन के बाद वह हिंदी विभाग के अध्यक्ष बने और इस भूमिका में रहते उन्होंने पाठ्यसामग्री के निर्माण में अभूतपूर्व योगदान दिया। 'हिंदी साहित्य का इतिहास' के प्रकाशन के साथ हिंदी साहित्य का एक ढाँचा बनकर तैयार हो गया था। उन्होंने सूरदास के 'भ्रमरगीत' संबंधी पदों का संग्रह किया और उसकी एक विस्तृत भूमिका लिखी। इसी तरह उन्होंने 'जायसी ग्रंथावली' का संपादन किया और उसकी भी एक लंबी भूमिका लिखी। इस बीच शुक्लजी ने काव्यशास्त्र और साहित्य सिद्धांतों का भी गंभीर अध्ययन किया जो बाद में उनकी पुस्तक 'रस मीमांसा' और 'चिंतामणि' में सुचिंतित रूप में व्यक्त हुई। हिंदी आलोचना को संस्कृत काव्यशास्त्र के प्रभाव से मुक्त कराने तथा हिंदी का अपना व्यवस्थित शास्त्र निर्मित करने की दृष्टि से 'रस मीमांसा' एक महत्त्वपूर्ण कृति है। 'चिंतामणि' में उन्होंने मनोविकार संबंधी निबंधों के साथ-साथ साहित्य-सिद्धांतों का भी विश्लेषण-मूल्यांकन किया।

रामचंद्र शुक्ल हिंदी के अत्यंत समादृत लेखक और आलोचक हैं। डॉ. रामविलास शर्मा उन्हें आलोचना के क्षेत्र में उतने ही महत्त्व से रखते हैं, जो महत्त्व प्रेमचंद का उपन्यास में है और निराला का कविता में। उन्होंने हिंदी में व्यवस्थित साहित्य-सिद्धांतों की नींव रखी, जिनके आधार पर हिंदी साहित्य का इतिहास लिखा और हिंदी साहित्य की व्यावहारिक आलोचना की। उन्होंने हिंदी-साहित्य के अध्ययन-अध्यापन के लिए व्यवस्थित रूप से पाठ्यक्रम का निर्माण किया और पाठ्यक्रम उपलब्ध करवाया। इसके साथ ही उन्होंने निबंध लेखन और अनुवाद का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। उनके पत्र और अख़बारों को भेजी गई टिप्पणियाँ भी प्रकाशित हैं। उनका समस्त रचना-कर्म एक-दूसरे का पूरक बना रहा। 'चिंतामणि' पर उन्हें अत्यंत प्रतिष्ठित मंगला प्रसाद पारितोषिक प्रदान किया गया।

**प्रमुख कृतियाँ :** काव्य में रहस्यवाद, विचार वीथि (मनोविकार संबंधी लेखों का पहला संग्रह), चिंतामणि-1 (विचार वीथि का परिवर्द्धित और परिष्कृत रूप), चिंतामणि-2 (काव्य में प्राकृतिक दृश्य, रहस्यवाद, अभिव्यंजनावाद संबंधी लेखों का संग्रह। सं. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र), चिंतामणि-3 (कुछ अप्रकाशित लेखों का संग्रह। सं. नामवर सिंह), त्रिवेणी (सुर, तुलसी, जायसी पर तीन निबंधों का संग्रह), हिंदी साहिय का इतिहास, रस मीमांसा, मालिक मुहम्मद जायसी, गोवास्मी तुलसीदास, साहित्य शास्त्र: सिद्धांत

और व्यवहार पक्ष, भाषा, साहित्य और समाज विमर्श। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ग्रंथावली (सं. ओमप्रकाश सिंह) के आठ खंडों में उनकी रचनाओं को संग्रहीत किया गया है।

- **मित्रता पाठ का सारांश - आचार्य रामचंद्र शुक्ल**

मित्रता आचार्य रामचंद्र शुक्ल द्वारा लिखित प्रसिद्ध निबंध है, जिसे उन्होंने जीवनोपयोगी विषय पर लिखा है, जिसमें इनकी लेखन-शैली संबंधी अनेक विशेषताओं के दर्शन हो जाते हैं। शुक्ल जी ने मित्रता के संबंध में बताते हुए कहा है कि जब कोई युवक किशोरावस्था में घर से बाहर जाता है, उसे मित्र चुनने में कठिनाई होती है। यदि उसका व्यवहार मेल-मिलाप वाला होता है, तो उसकी लोगों से जान-पहचान बढ़ जाती है जो बाद में मित्रता का रूप धारण कर लेती है। मित्रों के चुनाव पर उसके जीवन की सफलता निर्भर होती है क्योंकि अच्छे व बुरे मित्रों की संगति ही उसे अच्छा व बुरा बना सकती है। युवा लोग मित्र बनाने से पहले मित्रों के आचरण व प्रकृति का ध्यान नहीं रखते, वे केवल उनकी बाहरी विशेषताओं पर मुग्ध हो जाते हैं, जबकि मनुष्य अगर घोड़ा भी खरीदता है तो उसके गुण-दोषों को परख लेता है। किसी प्राचीन विद्वान ने कहा भी है ‘‘विश्वासपात्र मित्र से बड़ी रक्षा रहती है।’’ जिसे ऐसा मित्र मिल जाए उसे समझना चाहिए कि खजाना मिल गया।

जब व्यक्ति छात्रावास में रहता है तब उस पर मित्र बनाने की धुन सवार रहती है। बचपन की मित्रता भी अद्भुत है उसमें जितनी जल्दी दूसरे की बातें मन को लगती हैं, उतनी जल्दी ही रूठना मनाना भी हो जाता है। मित्रता व प्रेम के लिए यह आवश्यक नहीं है कि दो लोगों के आचरण व स्वभाव में समानता हो जैसे राम और लक्ष्मण के स्वभाव एक दूसरे से विपरीत थे, परंतु दोनों में प्रगाढ़ प्रेम था। उसी तरह कर्ण और दुर्योधन के स्वभाव में विपरीतता होने के बाद भी दोनों में गहरी मित्रता थी। इसी प्रकार चाणक्य व चंद्रगुप्त, अकबर व बीरबल आदि अनेक उदाहरण हैं। मित्र का परम कर्तव्य अपने मित्र की सहायता व उसे विकास के लिए प्रोत्साहित करना है। हमें ऐसे ही मित्रों की खोज करनी चाहिए, जो हमारे शुभचिंतक हों जैसे राम व सुग्रीव। यदि कोई हमारे भले बुरे के बारे में हमें सचेत न कर सके तो हमें उससे दूर ही रहना चाहिए। ऐसे युवक जो आवारागर्दी करते हैं उनसे शोचनीय जीवन किसी और का नहीं है। क्योंकि उन्हें फूल-पत्तियों, झरनों की कल-कल की आवाज आदि में कोई सौंदर्य नजर नहीं आता है। जो दिन-प्रतिदिन विषयवासनाओं में लिप्त रहता है और जिनके हृदय में केवल बुरे विचार ही उठते हैं ऐसे युवकों का भविष्य अंधकारमय होता है, अत: हमें ऐसे लोगों की मित्रता से दूर रहना चाहिए। बुरी संगति बहुत भयानक होती है क्योंकि यह व्यक्ति के सभी सद्गुणों का नाश कर देती है और दिन-प्रतिदिन मनुष्य को पतन के गड्ढे में गिरा देती है। इसके विपरीत अच्छी संगति मनुष्य को पतन के गड्ढे से बाहर निकालने वाली बाहु के समान होगी।

शुक्ल जी कहते हैं कि इंग्लैंड का एक विद्वान इस बात के लिए हमेशा खुश होता था कि उसे युवावस्था में राजदरबार में स्थान नहीं मिला क्योंकि वहाँ के लोगों की बुरी संगति उसके आध्यात्मिक विकास में बाधक होती। लेखक कहते हैं कि अश्लील व फूहड़ बात करने वालों को तुरंत रोक देना चाहिए। यदि तुम सोचोगे कि तुम्हारे चरित्र के प्रभाव के कारण वह स्वयं चुप हो जाएगा तो ऐसा संभव नहीं है। क्योंकि एक बार मनुष्य जब बुराई की तरफ बढ़ता है तो वह नहीं देखता कि वह कहाँ जा रहा है और उस बुराई के प्रति धीरे-धीरे तुम्हारी घृणा कम हो जाएगी। अंत में तुम भी बुराई के भक्त बन जाओगे। इसलिए मन को स्वच्छ और उज्ज्वल रखने का सर्वोत्तम उपाय बुरी संगति से दूर रहना है क्योंकि काजल की कोठरी में कितना भी चतुर व्यक्ति प्रवेश करे, उसे कालिख लग ही जाती है।

# साहित्य की महत्ता - आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी

## ➢ आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का परिचय

**जीवन-परिचय**- हिन्दी साहित्य के अमर कलाकार आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का जन्म सन् 1864 ई० (सं० 1921 वि०) में जिला रायबरेली में दौलतपुर नामक गाँव में हुआ था। इनके पिता पं० रामसहाय द्विवेदी सेना में नौकरी करते थे। आर्थिक दशा अत्यन्त दयनीय थी। इस कारण पढ़ने-लिखने की उचित व्यवस्था नहीं हो सकी। पहले घर पर ही संस्कृत पढ़ते रहे, बाद में रायबरेली, फतेहपुर तथा उन्नाव के स्कूलों में पढ़े, परन्तु निर्धनता ने पढ़ाई छोड़ने के लिए विवश कर दिया।

द्विवेदी जी पढ़ाई छोड़कर बम्बई चले गये। वहाँ तार का काम सीखा। तत्पश्चात् जी०आई०पी० रेलवे में 22 रु० मासिक की नौकरी कर ली। अपने कठोर परिश्रम तथा ईमानदारी के कारण इनकी निरन्तर पदोन्नति होती गयी। धीरे-धीरे ये 150 रु० मासिक पाने वाले हैड क्लर्क बन गये। नौकरी करते हुए भी आपने अध्ययन जारी रखा। संस्कृत, अंग्रेजी तथा मराठी का-भी इन्होंने गहरा ज्ञान प्राप्त कर लिया। उर्दू और गुजराती में भी अच्छी गति हो गयी। बम्बई से इनका तबादला झाँसी हो गया। द्विवेदी जी स्वाभिमानी व्यक्ति थे। अचानक एक अधिकारी से झगड़ा हो जाने पर नौकरी से त्याग-पत्र दे दिया। इसके पश्चात् आजीवन हिन्दी साहित्य की सेवा में लगे रहे।

द्विवेदी जी का व्यक्तित्व और कृतित्व, दोनों ही इतने प्रभावपूर्ण थे कि उस युग के सभी साहित्यकारों पर उनका प्रभाव था। वे युग-प्रवर्तक के रूप में प्रतिष्ठित हुए। हिन्दी साहित्य में वह युग (द्विवेदी युग) नाम से प्रसिद्ध हुआ। सन् 1938 ई० (पौष कृष्णा 30 सं० 1995 वि०) में यह महान् साहित्यकार जगत् को शोकमग्न छोड़कर परलोक सिधार गया।

**रचनाएँ**- द्विवेदी जी की मुख्य रचनाएँ निम्नलिखित हैं (क) **मौलिक रचनाएँ**-अद्भुत-आलाप, रसज्ञ रंजन-साहित्य-सीकर, विचित्र-चित्रण, कालिदास की निरंकुशता, हिन्दी भाषा की उत्पत्ति, साहित्य सन्दर्भ आदि।

(ख) **अनूदित रचनाएँ**- रघुवंश, हिन्दी महाभारत, कुमारसम्भव, बेकन विचारमाला, किरातार्जुनीय शिक्षा एवं स्वाधीनता, वेणी संहार तथा गंगा लहरी आदि आपकी प्रसिद्ध अनूदित रचनायें हैं।

## ➢ साहित्य की महत्ता पाठ का सार

**जीवन-परिचय**- हिन्दी साहित्य के अमर कलाकार आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का जन्म सन् 1864 ई. में जिला रायबरेली में दौलतपुर नामक गाँव में हुआ था। इनके पिता पं० रामसहाय द्विवेदी सेना में नौकरी करते थे। आर्थिक दशा अत्यन्त दयनीय थी। द्विवेदी जी का व्यक्तित्व और कृतित्व, दोनों ही इतने प्रभावपूर्ण थे कि उस युग के सभी साहित्यकारों पर उनका प्रभाव था। वे युग-प्रवर्तक के रूप में प्रतिष्ठित हुए। हिन्दी साहित्य में वह युग (द्विवेदी युग) नाम से प्रसिद्ध हुआ। सन् 1938 ई. में यह महान् साहित्यकार जगत् को शोकमग्न छोड़कर परलोक सिधार गया।

**सारांश:**

**शास्त्र और साहित्य:** ज्ञान राशि के संचित कोष को ही "साहित्य" कहते है। शास्त्र का संबध धर्म से है। धार्मिक ग्रन्थों से है, तथा धार्मिक विचारों से है। लेकिन साहित्य का संबंध जाती विशेष के है। भाषा की शोभा, श्रीसंपन्नता, उसकी मान मर्यादा उसके साहित्य पर ही निर्भर होती है। आंत में हम कह सकते है की शास्त्रों का साहित्य से अविनाभाव संबंध है। मानव जीवन में साहित्य की अवशकता :जिस प्रकार मानव स्वस्थ रहने के लिए भोजन करता है। उसी प्रकार मस्तिष्क को स्वस्थ लिए साहित्य का रसास्वादन करना चाहिए। शरीर का खाद्य भोजनीय पदार्थ है। इसीलिए हमें साहित्य का सतत सेवन करना चाहिए , उसमे नेवीनता तथा पौष्टीकता लाने के लिए उसका उत्पादन भी करते जाना चाहिए। जिस प्रकार विकृत भोजन से शरीर रुग्ण होकर बीमार पड़ जाता है, उसी तरह विकृत साहित्य से मस्तिष्क भी विकार ग्रस्त होकर रोगी बन जाता है।

**साहित्य के द्वारा सभ्यता की परीक्षा लेना:**

सभ्य मानव के लिए साहित्य का निर्माण अनिवार्य है। सामाजिक शक्ति या सजीवता,सामाजिक आशक्ति या निर्जीविथा और सामाजिक सभ्यता तथा असभ्यता का निर्णायक एक मात्र साहित्य ही है। जातियों की क्षमता और सजीवता साहित्य रूपी आईने में देखने को मिल सकती है।

**विदेशी भाषाएँ और साहित्य का दृष्टिकोण:**

किसी भी राष्ट्र के लिए अपनी भाषा का साहित्य जाती और स्वदेश की उन्नति का साधक है। ऐसी नहीं है की हमें विदेशी भाषा सीखने की नही चाहिए। आवश्यकता और अनुकूलता होने पर हमे एक से अधिक सीख कर ज्ञानार्जन करना चाहिए।

**साहित्य और विज्ञान विषय:** मनुष्य अपने भावों एवं विचारों को साहित्य के माध्यम से व्यक्त करता है। विज्ञान मानव के लिए कई सुविधाएँ तैयार कर सकता है,लेकिन साहित्य के द्वारा ही मानव जीवन सुंदर बन सकता है। अंत में हम कह सकते है की विज्ञयन से भी बढ़कर साहित्य को प्रधानता देना चाहिए।

## मुक्तिधन – प्रेमचंद

- **प्रेमचन्द जीवन परिचय**

प्रेमचन्द का जन्म ३१ जुलाई सन् १८८० को बनारस शहर से चार मील दूर समही गाँव में हुआ था। आपके पिता का नाम अजायब राय था। वह डाकखाने में मामूली नौकर के तौर पर काम करते थे। धनपतराय की उम्र जब केवल आठ साल की थी तो माता के स्वर्गवास हो जाने के बाद से अपने जीवन के अन्त तक लगातार विषम परिस्थितियों का सामना धनपतराय को करना पड़ा। आपका जीवन गरीबी में ही पला। कहा जाता है कि आपके घर में भयंकर गरीबी थी। पहनने के लिए कपड़े न होते थे और न ही खाने के लिए पर्याप्त भोजन मिलता था। इन सबके अलावा घर में सौतेली माँ का व्यवहार भी हालत को खस्ता करने वाला था। आपके पिता ने केवल १५ साल की आयू में आपका विवाह करा दिया। पत्नी उम्र में आपसे बड़ी और बदसूरत थी। पत्नी की सूरत और उसके जबान ने आपके जले पर नमक का काम किया। अपनी गरीबी से लड़ते हुए प्रेमचन्द ने अपनी पढ़ाई मैट्रिक तक पहुंचाई। जीवन के आरंभ में आप अपने गाँव से दूर बनारस पढ़ने के लिए नंगे पाँव जाया करते थे। इसी बीच पिता का देहान्त हो गया।

जीवन की प्रतिकूल परिस्थितियों में मैट्रिक पास किया। तेरह वर्ष की उम्र में से ही प्रेमचन्द ने लिखना आरंभ कर दिया था। शुरु में आपने कुछ नाटक लिखे फिर बाद में उर्दू में उपन्यास लिखना आरंभ किया। इस तरह आपका साहित्यिक सफर शुरु हुआ जो मरते दम तक साथ – साथ रहा। सादा एवं सरल जीवन के मालिक प्रेमचन्द सदा मस्त रहते थे। उनके जीवन में विषमताओं और कटुताओं से वह लगातार खेलते रहे। इस खेल को उन्होंने बाजी मान लिया जिसको हमेशा जीतना चाहते थे। अपने जीवन की परेशानियों को लेकर उन्होंने एक बार मुंशी दयानारायण निगम को एक पत्र में लिखा "हमारा काम तो केवल खेलना है– खूब दिल लगाकर खेलना– खूब जी– तोड़ खेलना, अपने को हार से इस तरह बचाना मानों हम दोनों लोकों की संपत्ति खो बैठेंगे। प्रेमचन्द उच्चकोटि के मानव थे। आपको गाँव जीवन से अच्छा प्रेम था। बाहर से बिल्कुल साधारण दिखने वाले प्रेमचन्द अन्दर से जीवनी–शक्ति के मालिक थे। अन्दर से जरा सा भी किसी ने देखा तो उसे प्रभावित होना ही था। वह आडम्बर एवं दिखावा से मीलों दूर रहते थे। जीवन में न तो उनको विलास मिला और न ही उनको इसकी तमन्ना थी। तमाम महापुरुषों की तरह अपना काम स्वयं करना पसंद करते थे।

सन् १८९४ ई० में "होनहार बिरवार के चिकने–चिकने पात" नामक नाटक की रचना की। सन् १८९८ में एक उपन्यास लिखा। लगभग इसी समय "रुठी रानी" नामक दूसरा उपन्यास जिसका विषय इतिहास था की रचना की। सन १९०२ में प्रेमा और

सन् १९०४–०५ में "हम खुर्मा व हम सवाब" नामक उपन्यास लिखे गए। इन उपन्यासों में विधवा–जीवन और विधवा–समस्या का चित्रण प्रेमचन्द ने काफी अच्छे ढंग से किया।

"सेवा सदन", "मिल मजदूर" तथा १९३५ में गोदान की रचना की। गोदान आपकी समस्त रचनाओं में सबसे ज्यादा मशहूर हुई अपनी जिन्दगी के आखिरी सफर में मंगलसूत्र नामक अंतिम उपन्यास लिखना आरंभ किया। दुर्भाग्यवश मंगलसूत्र को अधूरा ही छोड़ गये। इससे पहले उन्होंने महाजनी और पूँजीवादी युग प्रवृत्ति की निन्दा करते हुए "महाजनी सभ्यता" नाम से एक लेख भी लिखा था। सन् १९३६ ई० में प्रेमचन्द बीमार रहने लगे। अपने इस बीमार काल में ही आपने "प्रगतिशील लेखक संघ" की स्थापना में सहयोग दिया। आर्थिक कष्टों तथा इलाज ठीक से न कराये जाने के कारण ८ अक्टूबर १९३६ में आपका देहान्त हो गया।

- **मुक्तिधन कहानी का सारांश लिखकर उसकी विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।**

उपन्यास साम्राट मुंशी प्रेमचंद एक युगनिर्माता कहानीकार भी रहे। आपने तीन सौ से अधिक कहानियों की रचना की। आप की कहानियाँ मानसरोवर के आठ भागों में संगृहीत है। राष्ट्रीय चेतना भरी प्रारंभिक कहानियों का संग्रह सोजेवतन है। प्रेमाश्रम, निर्मला, प्रतिज्ञा, गबन, कर्मभूमि, सेवसादन, वरदान, दुर्गादास, मंगलसूत्र (अपूर्ण) और गोदान आपके उपन्यास हैं। उपन्यास और कहानी के अतिरिक्त नाटक, निबंध, बाल साहित्य एवं अनुवाद क्षेत्र में भी आपने अपनी लेखनी चलाई।
प्रस्तावना : समसामयिक समस्याओं के यथार्थ चित्रण के साथ-साथ उस पर व्यंग करते हुए, पाठकों की दृष्टि आकृष्ट करना तथा मानव में निहित उदारता और सहृदयता को उभारते हुए एक सामाजिक आदर्श की ओर दिशा-निर्देश करना प्रेमचन्द की रचनाओं की एक अन्यतम विशेषता रही। आपकी कहानियों में यथार्थवाद, अति यथार्थवाद एवं आदर्शवाद की झलक मिलती है। मानवता और जीवन मूल्यों की चमक आपके पात्रों में दिखाई देती है।

समाज में धार्मिक सहिष्णुता, दूसरों के धार्मिक विश्वासों पर श्रद्धा एवं विश्वास, मानवता की भावना और उदारता पूर्ण व्यवहार की स्थापना "मुक्तिधन" नामक इस कहानी का लक्ष्य रहा। समाज की यथार्थ स्थिति, भारतीय किसानों की आर्थिक विडम्बना, महाजनों का शोषण आदि का व्यंगपूर्ण चित्रण करते हुए आदर्शोन्मुख मानवीय प्रवृत्तियों का शब्द चित्र प्रस्तुत करना इस कहानी की विशेषता रही। इस कहानी में सांप्रदायिक घेरे से और आर्थिक असमानता से ऊपर उठकर उदारतापूर्ण मानवीय व्यवहार का मनोरम अंकन किया गया है।

**परिवेश :** भारत के गरीब किसानों की आर्थिक-दुर्दशा, महाजनों का शोषण, लेनदेन व्यवसाय को अन्य व्यवसायों से अत्यंत लाभदायक मानकर गरीब किसानों का खून चूसने वाली महाजनी व्यवस्था के यधार्थ एवं जीवंत चित्रण से कहानी का आरम्भ होता है।

**कथा वस्तु :** लाला दाऊदयाल एक महाजन हैं। मुकतारगिरी करते हैं। बचत के पैसे 25-30 रुपये सैकड़ा वार्षिक ब्याज पर उधार देते हैं। उसका व्यवसाय अधिकतर निम्नस्तर के लोगों से ही रहता है। कचहरी से घर जाते समय उनहोंने एक मोहिनी रूपवाली गाय बेचने को तैयार रहमान को देखा। वह बहुत दुखी था। अपने करूँ नेत्रों से गाय को देखते हुये दिल मसोसकर रह जाता था। पूछ-ताछ के बाद उन दोनों के बीच सौदा 35 रुपये पर तय हुआ। इसके बाद भी कुछ लोग 36 या 40 रुपये देने को भी तैयार हुए। लेकिन रहमान ने न कर दिया। क्योंकि वह अपने घर की लक्ष्मी जैसी गाय किसी कसाई की अपेक्षा एक हिन्दू (दाऊदयाल) को ही बेचना चाहता था।

जमींदार के इजाफा लगान के दावे की जवाब देही करने केलिए रहमान को रुपये की जरूरत थी। घर में बैलों के सिवा और कोई संपत्ति नहीं थी। अतः वह अपने प्राणों से प्रिय, घर की लक्ष्मी गऊ को बेचने को विवश हुआ।

हज जाने की अपनी बूढ़ी मटा की इच्छा पूरी करने केलिए वह दाऊदयाल से दो सौ रुपये दो साल की मीयाद पर उदार लेता है। माता की तबीयत बिगड़ जाने के कारण, ऊख बिना पानी के सुख जाने के कारण वह पैसा चुका नहीं सका। अपना दुखड़ा सुनाकर और एक साल का समय मांगा। 32 सैकड़े सूद पर एक साल का समय देने दाऊदयाल राजी हुए।

रहमान घर आये तो माँ परलोक सिधारी। अड़ोस पड़ोस के लोगों से पैसे उधार लेकर दफन-कफन का प्रबंध तो किया। लेकिन मृत आत्मा के संतोष के लिए कई संस्कार करने बाकी थे। अनेक संकल्प-विकल्पों के उपरांत फिर दाऊदयाल से ही कर्ज मांगने चला।

दाऊदयाल ने पहले रहमान से रुष्टतापूर्ण व्यवहार किया। लेकिन रहमान की दयनीय स्थिति पर दया करके दो सौ रुपये दिये। दाऊदयाल के व्यवहार से परिचित व्यक्ति उनकी इस उदारता से चकित हो गये। उस साल खेती की हालत अत्यंत आशाजनक रही। रहमान की उम्मीद थी कि वह इस बार अवश्य पैसा चुका सकेगा। लेकिन आगा लग जाने से सारा खेत जलकर राख़ हो गया। दाऊदयाल का आदमी (चपरासी) रहमान को घसीटता हुआ ले चला। अल्लाह की दुआ माँगते हुए जैसे भी रहमान ने पाँच कोस का रास्ता तय किया। उसने अपनी दयनीय स्थिति बताकर अपनी हालत पर दया करने की पार्थना की। पूरी हालत सुनने के बाद दाऊदयाल ने मुस्कुराते हुए पूछा कि "तुम्हारे माँ में इस वक्त सबसे बड़ी आरजू क्या है?" रहमान ने उत्तर दिया- 'यही हुजूर कि आपके रुपये अदा ही जाए।' तुरंत दाऊदयाल ने कहा- 'अच्छा तो समझ लो तुम्हारे रुपये अदा हो गये।' इसे रहमान स्वीकार नहीं करता और कहता है- मैं ऋण का बोझ सिरपर लेकर मारना नहीं चाहता। तब दाऊदयाल उसे समझाते हुए यों कहता है-

मैं तुम्हारा कर्जदार हूँ, तुम मेरे कर्जदार नहीं हो। तुम्हारी गऊ अब तक मेरे पास है, उसने कम से कम मुझे आठ सौ रुपये का दूध दे दिया है, दो बछड़े नफे मे अलग। अगर तुमने यह गऊ कसाइयों को दे दी होती, तो मुझे इतना फायदा क्यों होता ? तुमने उस वक्त पाँच रुपये का नुकसान उठाकर गऊ मेरे हाथ बेची थी। तुम्हारी वह शराफत मुझे याद है ..... तुम शरीफ और अच्छे आदमी हो। मैं तुम्हारी मदद करने को हमेशा तैयार रहूँगा। रहमान महसूस करता है कि सामने कोई फरिश्ता बैठा हुआ है। वह अपने आपको दाऊदयाल का गुलाम मानता है।

लेकिन दाऊदयाल रहमान को अपना दोस्त मानता है। वे स्पष्ट करते है कि "गुलाम छुटकारा पाने केलिए जो रुपये देता है उसे मुक्तिधन कहते हैं। तुम बहुत पहले "मुक्तिधन" अदाकार चुके हो। अब भूलकर भी यह शब्द मुँह से न निकालना।

**विशेषताएँ :** 'मुक्तिधन' नामक कहानी का कथावस्तु भारतीय किसानों की आर्थिक दुर्दशा तथा महाजनी सभ्यता के शोषण के परिवेश पर आधारित है। भारत वर्ष के अनेक व्यवसायों में अत्यन्त लाभदायक लेन-देन के व्यवसाय की आधार शीला पर कथानक का घटनाक्रम चलता है। इस लेन-देन के जीवंत रूप से कहानी के आरम्भ में ही परिचित होते हैं।

## पुरस्कार – जयशंकर प्रसाद

### ➢ जयशंकर प्रसाद का परिचय

जयशंकर प्रसाद हिन्दी कवि, नाटककार, उपन्यासकार तथा निबन्धकार थे। वे हिन्दी के छायावादी युग के चार प्रमुख स्तंभों में से एक हैं। उन्होंने हिन्दी काव्य में एक तरह से छायावाद की स्थापना की जिसके द्वारा खड़ी बोली के काव्य में न केवल कमनीय माधुर्य की रससिद्ध धारा प्रवाहित हुई, बल्कि जीवन के सूक्ष्म एवं व्यापक आयामों के चित्रण की शक्ति भी संचित हुई और कामायनी तक पहुँचकर वह काव्य प्रेरक शक्तिकाव्य के रूप में भी प्रतिष्ठित हो गया। बाद के प्रगतिशील एवं नई कविता दोनों धाराओं के प्रमुख आलोचकों ने उसकी इस शक्तिमत्ता को स्वीकृति दी। इसका एक अतिरिक्त प्रभाव यह भी हुआ कि खड़ीबोली हिन्दी काव्य की निर्विवाद सिद्ध भाषा बन गयी।

प्रसाद जी का जन्म माघ शुक्ल 10, संवत् 1946 वि० (तदनुसार 30जनवरी 1889ई० दिन-गुरुवार) को काशी के सरायगोवर्धन में हुआ। इनके पितामह बाबू शिवरतन साहू दान देने में प्रसिद्ध थे और एक विशेष प्रकार की सुरती (तम्बाकू) बनाने के कारण 'सुँघनी साहु' के नाम से विख्यात थे। इनके पिता बाबू देवीप्रसाद जी कलाकारों का आदर करने के लिये विख्यात थे। इनका काशी में बड़ा सम्मान था और काशी की जनता काशीनरेश के बाद 'हर हर महादेव' से बाबू देवीप्रसाद का ही स्वागत करती थी। किशोरावस्था के पूर्व ही माता और बड़े भाई का देहावसान हो जाने के कारण 17 वर्ष की उम्र में ही प्रसाद जी पर आपदाओं का पहाड़ ही टूट पड़ा। कच्ची गृहस्थी, घर में सहारे के रूप में केवल विधवा भाभी, कुटुबिंयों, परिवार से संबद्ध अन्य लोगों का संपत्ति हड़पने का षड्यंत्र, इन सबका सामना उन्होंने धीरता और गंभीरता के साथ किया। प्रसाद जी की प्रारंभिक शिक्षा काशी में क्वींस कालेज में हुई, किंतु बाद में घर पर इनकी शिक्षा का व्यापक प्रबंध किया गया, जहाँ संस्कृत, हिंदी, उर्दू, तथा फारसी का अध्ययन इन्होंने किया। दीनबंधु ब्रह्मचारी जैसे विद्वान् इनके संस्कृत के अध्यापक थे। इनके गुरुओं में 'रसमय सिद्ध' की भी चर्चा की जाती है।

घर के वातावरण के कारण साहित्य और कला के प्रति उनमें प्रारंभ से ही रुचि थी और कहा जाता है कि नौ वर्ष की उम्र में ही उन्होंने 'कलाधर' के नाम से व्रजभाषा में एक सवैया लिखकर 'रसमय सिद्ध' को दिखाया था। उन्होंने वेद, इतिहास, पुराण तथा साहित्य शास्त्र का अत्यंत गंभीर अध्ययन किया था। वे बाग-बगीचे तथा भोजन बनाने के शौकीन थे और शतरंज के खिलाड़ी भी थे। वे नियमित व्यायाम करनेवाले, सात्विक खान पान एवं गंभीर प्रकृति के व्यक्ति थे। वे नागरीप्रचारिणी सभा के उपाध्यक्ष भी थे।

**जयशंकर प्रसाद की काव्य रचनाएँ हैं:** कानन कुसुम, महाराणा का महत्व, झरना (1918), आंसू, लहर, कामायनी (1935) और प्रेम पथिक।

**कहानी संग्रह :** कथा के क्षेत्र में प्रसाद जी आधुनिक ढंग की कहानियों के आरंभयिता माने जाते हैं। सन् 1912 ई. में 'इंदु' में उनकी पहली कहानी 'ग्राम' प्रकाशित हुई। उन्होंने कुल 72 कहानियाँ लिखी हैं। उनके कहानी संग्रह हैं: छाया, प्रतिध्वनि, आकाशदीप, आंधी और इन्द्रजाल।

**उपन्यास :** प्रसाद ने तीन उपन्यास लिखे हैं। 'कंकाल', में नागरिक सभ्यता का अंतर यथार्थ उद्घाटित किया गया है। 'तितली' में ग्रामीण जीवन के सुधार के संकेत हैं। प्रथम यथार्थवादी उन्यास हैं ; दूसरे में आदर्शोन्मुख यथार्थ है। इन उपन्यासों के द्वारा प्रसाद जी हिंदी में यथार्थवादी उपन्यास लेखन के क्षेत्र में अपनी गरिमा स्थापित करते हैं। 'इरावती' ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर लिखा गया इनका अधूरा उपन्यास है जो रोमांस के कारण ऐतिहासिक रोमांस के उपन्यासों में विशेष आदर का पात्र है।

**नाटक:** प्रसाद ने आठ ऐतिहासिक, तीन पौराणिक और दो भावात्मक, कुल 13 नाटकों की सर्जना की। 'कामना' और 'एक घूँट' को छोड़कर ये नाटक मूलत: इतिहास पर आधृत हैं। इनमें महाभारत से लेकर हर्ष के समय तक के इतिहास से सामग्री ली गई है। वे हिंदी के सर्वश्रेष्ठ नाटककार हैं। उनके नाटकों में सांस्कृतिक और राष्ट्रीय चेतना इतिहास की भित्ति पर संस्थित है। उनके नाटक हैं: स्कंदगुप्त, चंद्रगुप्त, ध्रुवस्वामिनी, जन्मेजय का नाग यज्ञ, राज्यश्री, कामना, एक घूंट।

### ➢ पुरस्कार कहानी का सारांश

पुरुस्कार कहानी हिंदी के प्रसिद्ध लेखक 'जयशंकर प्रसाद' द्वारा लिखित कहानी है। कहानी की मुख्य पात्र एक तरुण आयु की कन्या 'मधुलिका' है। जो कोशल राज्य के ही एक वीर सैनिक सिहंमित्र की पुत्री है। सिंहमित्र ने पूर्व समय में अपनी वीरता से कोशल राज्य के सम्मान की रक्षा की थी। कहानी का आरंभ उस दृश्य के साथ होता है जब कोशल नरेश राज्य की परंपरा के निर्वाह के लिये हर वर्ष इन्द्र की पूजा होती थी। ये एक कृषि उत्सव था जिसमें राजा अपने राज्य के किसी किसान की भूमि का

अधिग्रहण कर उसमें एक दिन का कृषि कार्य करता और उत्सव के अन्य आयोजन संपन्न करता था। इस बार मधूलिका का खेत राजा ने अधिग्रहण किया था। राजा पुरुस्कार स्वरूप मधुलिका बहुत बड़ी धनराशि देनी चाही वो पर वो पुरुस्कार लेने से मना कर देती है, और कहती है कि वो अपने खेत का सौदा नही करेगी। राजा के कहने पर और अन्य लोगों के समझाने पर भी वो नही मानती। इस उत्सव में आसपास से राज्यों से भी राजा-राजकुमार आदि अतिथि रूप में आते थे। मगध का राजकुमार अरुण भी वहाँ आया हुआ था और वो ये घटना देख रहा था। उत्सव संपन्न हो जाता है, मधुलिका पुरुस्कार नही लेती है, राजकुमार अरुण ये मधुलिका से प्रभावित होता है। वो रात में मधुलिका की कुटिया में उससे मिलने आता है, उससे प्रणय निवेदन करता है। वो कहता है कि वो उसकी सहचरी बन जाये। वो कोशल नरेश से कहकर उसका खेत वापस दिलवा देगा। पर मधुलिका उसके आग्रह को ठुकरा देती है, वो वापस लौट जाता है।

मधुलिका फिर अपने खेत नही जाती और दूसरे खेतों में काम करके किसी तरह अपना जीवन-यापन करती है। यूं ही तीन वर्ष बीत जाते हैं। अब मधुलिका अपनी आर्थिक विपन्नता से व्यथित हो चुकी है, उसे राजकुमार अरुण की भी याद आती है। एक रात संयोग से राजकुमार स्वयं उसकी कुटिया में शरणार्थी के रूप में आ जाता है। वो बताता है कि उसने अपने राज्य में विद्रोह कर दिया है और अपने राज्य से निष्काषित कर दिया गया है।

मधुलिका भी उससे प्रेम कर बैठती है और उसकी बातों में आ जाती है। अरुण मधुलिका को इस बात के लिये राजी कर लेता है कि वो कोशल नरेश से अपने खेत के बदले में किले के पास वाली भूमि मांग ले। चूंकि वो भूमि किले के पास है अतः वहाँ से अरुण अपने साथी सैनिकों के साथ किले पर आसानी से हमला कर सकता है। वो मधुलिका को लोभ देता है कि वो कोशल पर कब्जा कर अपना शासन स्थापित कर लेगा और उसे अपनी रानी बनायेगा। मधुलिका भी प्रेम में थी इसलिये उसे भी रानी बनने का लोभ हो जाता है। वो कोशल नरेश के पास जाकर किले के नाले के पास वाली भूमि मांग लेती है। अरुण भूमि पाकर खुश होता है वो कोशल पर छुपकर आक्रमण करने की तैयारी करने लगता है।

पर मधूलिका का मन अशांत है वो सोचती है कि वो क्या करने जा रही है। कहाँ उसने अपनी ईमानदारी और सम्मान की खातिर अपने खेत के बदले राजा से पुरुस्कार तक नही लिया, और अब वो राज्य के एक शत्रु को पनाह देने के लिए राजा की दी भूमि का उपयोग कर रही है। उसके पिता ने राज्य की रक्षा के लिये अपने प्राण दे दिये और वो राज्य के साथ विश्वासघात कर रही है। उसकी अन्तरात्मा उसे धिक्कारती है और वो राजा को सारी बाते बता देती है कि पड़ोसी राज्य मगध का विद्रोही राजकुमार अरुण कोशल पर आक्रमण करने की योजना बना रहा है। राजा शीघ्र ही अरुण को पकड़ लेता है। उसे मृत्युदंड दिया जाता है। राजा मधुलिका की प्रशंसा करते हुये उसे पुरुस्कार मांगने को कहता है तो मधुलिका स्वयं के लिये भी मृत्युदंड का मांग करते हुये अरुण के पास खड़ी हो जाती है।

**पुरस्कार कहानी का उद्देश्य :** राष्ट्र प्रेम के साथ-साथ अपने वंश के द्वारा ली गई जमीन को ना बेचना आत्म सम्मान की रक्षा करना अपने आत्म गौरव के लिए किसी भी प्रकार का समझौता न करना इस कहानी का उद्देश्य है। इस कहानी में मधुलिका अपने आत्म सम्मान के लिए किसी भी प्रकार का मूल्य ग्रहण नहीं करती हुई दिखाई गई हैं जो की हर इंसान में होना चाहिए एक उद्देश्य यह भी है। हिंदी में ऐसे बहुत ही कम रचना देखने को मिलती है जिसमें इन दोनों का चित्रण साथ-साथ और बड़ी ही कुशल वार्ता इस कहानी में प्रस्तुत की गई है। मधुलिका इस कहानी की मुख्य पात्रा हैं जिसने माध्यम से इस कहानी के उद्देश्य को जयशंकर प्रसाद ने लोगों तक पहुंचाने का प्रयास किया है। पुरस्कार कहानी में अरूण नायक है जो की आखिर में इस कहानी का खलनायक भी बनता है जो कौशल को अपने अधिकार में करने के उद्देश्य से मधुलिका के पास आया था। मधुलिका की आड़ में अरुण कौशल राज्य के समीप ही मधुलिका को खेती के लिए जमीन की मांग करवाता है ताकि वहाँ रहकर वह युद्ध की तैयारी कर सके।

पुरस्कार कहानी में राष्ट्र प्रेम को अपने निजी प्रेम से भी ऊपर दिखाने का प्रयास किया गया है जिसमें लेखक सफल भी रहे हैं। इसमें वह सफल भी हो जाता है लेकिन आखिर में मधुलिका की राष्ट्र भक्ति के सामने वह हार जाता है। और अंत में मधुलिका को जब पुरस्कार देने की बात जब महाराज करते हैं तो वह किसी भी तरह के पुरस्कार लेने से मना कर देती है। मधुलिका जो की राष्ट्र प्रेम में चूर होने के साथ साथ अपने निजी प्रेम में भी आसक्त थी चुकी उसने लगभग तीन साल अरूण का इंतजार किया था इस वजह से भी उसके प्रेम में बहुत गहराई आ गई थी। चुकी वह अरूण से भी उतना ही प्रेम करती थीं जितना की अपने राष्ट्र से इसलिए वह आखिर में वह पुरस्कार के रूप में वहीं दण्ड मांगती है जो की अरूण को दिया गया था। इस प्रकार कहानी का अंत पुरस्कार के रूप में मृत्युदंड मांगती हुई मधुलिका से होता है। पुरस्कार कहानी प्रेम और कर्तव्य के द्वंद की कहानी है।

**विशेषताएं :-**

> प्रसाद भारत की गरिमा और गौरव का बखान सांस्कृतिक, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में कर रहे थे। इस तरह वह अंग्रेजों की पराधीनता से उपजी भारतीय जनता की हताशा और पीड़ा को अतीत के गौरवान से फैलाना चाहते थे।

> बरसा दे जिस समय कहानियां लिख रहे थे वह स्वाधीनता आंदोलन में उत्कर्ष

> प्रसाद ने मुक्ति चेतना को इतिहास से जोड़कर अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त कि

> उन्होंने ऐतिहासिक पात्रों के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना को व्यक्त करने का प्रयास किया है। > 'पुरस्कार' उनकी ऐसी ही रचना है जिसमें प्रेम और मुक्ति चेतना का विकास लक्षित किया जा
सकता है। राजा द्वारा मधुलिका की कृषि भूमि अधिग्रहित कर लेने पर भी वह पुरस्कार नहीं लेती
क्योंकि वह उसकी पैतृक संपत्ति थी जिसे बेचना वह अपराध समझती थी।

## हिन्दी साहित्य का इतिहास

### ➢ हिन्दी साहित्य का सामान्य परिचय :

हिंदी साहित्य का आरम्भ आठवीं शताब्दी से माना जाता है। यह वह समय है जब सम्राट हर्ष की मृत्यु के बाद देश में अनेक छोटे-छोटे शासन केन्द्र स्थापित हो गए थे जो परस्पर संघर्षरत रहा करते थे हिन्दी साहित्य के विकास को आलोचक सुविधा के लिये पाँच ऐतिहासिक चरणों में विभाजित कर देखते हैं, जो क्रमवार निम्नलिखित हैं:-

- आदिकाल (1400 ईस्वी पूर्व)
- भक्ति काल (1375 से 1700)
- रीति काल (संवत् 1700 से 1900)
- आधुनिक काल (1850 ईस्वी के पश्चात)
- नव्योत्तर काल (1980 ईस्वी के पश्चात)**आदिकाल :** हिन्दी साहित्य आदिकाल को आलोचक 1400 ईसवी से पूर्व का काल मानते हैं जब हिन्दी का उद्भव हो ही रहा था। हिन्दी की विकास-यात्रा दिल्ली, कन्नौज और अजमेर क्षेत्रों में हुई मानी जाती है। पृथ्वीराज चौहान का उस समय दिल्ली में शासन था और चंदबरदाई नामक उसका एक दरबारी कवि हुआ करता था। चंदबरदाई की रचना 'पृथ्वीराजरासो' है, जिसमें उन्होंने अपने मित्र पृथ्वीराज की जीवन गाथा कही है। 'पृथ्वीराज रासो' हिन्दी साहित्य में सबसे बृहत् रचना मानी गई है। कन्नौज का अन्तिम राठौड़ शासक जयचंद था जो संस्कृत का बहुत बड़ा संरक्षक था।
- भक्ति काल : हिन्दी साहित्य का भक्ति काल 1375 से 1700 तक माना जाता है। यह काल प्रमुख रूप से भक्ति भावना से ओतप्रोत है। इस काल को समृद्ध बनाने वाली दो काव्य-धाराएँ हैं -1.निर्गुण भक्तिधारा तथा 2.सगुण

भक्तिधारा। निर्गुण भक्तिधारा को आगे दो हिस्सों में बाँटा गया है। एक है संत काव्य जिसे ज्ञानाश्रयी शाखा के रूप में भी जाना जाता है, इस शाखा के प्रमुख कवि, कबीर, नानक, दादूदयाल, रैदास, मलूकदास, सुन्दरदास, धर्मदास[1] आदि हैं।

निर्गुण भक्तिधारा का दूसरा हिस्सा सूफी काव्य का है। इसे प्रेमाश्रयी शाखा भी कहा जाता है। इस शाखा के प्रमुख कवि हैं- मलिक मोहम्मद जायसी, कुतुबन, मंझन, शेख नबी, कासिम शाह, नूर मोहम्मद आदि।

भक्तिकाल की दूसरी धारा को सगुण भक्ति धारा कहा जाता है। सगुण भक्तिधारा दो शाखाओं में विभक्त है- रामाश्रयी शाखा, तथा कृष्णाश्रयी शाखा। रामाश्रयी शाखा के प्रमुख कवि हैं- तुलसीदास, अग्रदास, नाभादास, केशवदास, हृदयराम, प्राणचंद चौहान, महाराज विश्वनाथ सिंह, रघुनाथ सिंह।

कृष्णाश्रयी शाखा के प्रमुख कवि हैं- सूरदास, नंददास, कुम्भनदास, छीतस्वामी, गोविन्द स्वामी, चतुर्भुज दास, कृष्णदास, मीरा, रसखान, रहीम आदि। चार प्रमुख कवि जो अपनी-अपनी धारा का प्रतिनिधित्व करते हैं। ये कवि हैं (क्रमशः)

कबीरदास (1399)-(1518) मलिक मोहम्मद जायसी (1477-1542) सूरदास (1478-1580) तुलसीदास (1532-1602)

रीति काल का परिचय : हिंदी साहित्य का रीति काल संवत 1700 से 1900 तक माना जाता है यानी सन् 1643 ई० से सन् 1843 ई० तक। रीति का अर्थ है बना बनाया रास्ता या बँधी-बँधाई परिपाटी। इस काल को रीतिकाल इसलिए कहा गया है क्योंकि इस काल में अधिकांश कवियों ने श्रृंगार वर्णन, अलंकार प्रयोग, छन्द बद्धता आदि के बँधे रास्ते की ही कविता की। हालांकि घनानंद, बोधा, ठाकुर, गोबिंद सिंह जैसे रीति-मुक्त कवियों ने अपनी रचना के विषय मुक्त रखे। इस काल को रीतिबद्ध, रीतिसिद्ध और रीतिमुक्त तीन भागों में बाँटा गया है।

रीति कालीन कवि :

केशव (१५४६-१६१८), बिहारी (1603-1664), भूषण (1613-1705), मतिराम, घनानन्द , सेनापति आदि इस युग के प्रमुख रचनाकार रहे।

**आधुनिक काल :** आधुनिक काल हिन्दी साहित्य पिछली दो सदियों में विकास के अनेक पड़ावों से गुज़रा है। जिसमें गद्य तथा पद्य में अलग अलग विचार धाराओं का विकास हुआ। जहाँ काव्य में इसे छायावादी युग, प्रगतिवादी युग, प्रयोगवादी युग और यथार्थवादी युग इन चार नामों से जाना गया, वहीं गद्य में इसको, भारतेंदु युग, द्विवेदी युग, रामचंद शुक्ल व प्रेमचंद युग तथा अद्यतन युग का नाम दिया गया।

अद्यतन युग के गद्य साहित्य में अनेक ऐसी साहित्यिक विधाओं का विकास हुआ जो पहले या तो थीं ही नहीं या फिर इतनी विकसित नहीं थीं कि उनको साहित्य की एक अलग विधा का नाम दिया जा सके। जैसे डायरी, यात्रा विवरण, आत्मकथा, रूपक, रेडियो नाटक, पटकथा लेखन, फ़िल्म आलेख इत्यादि.

### ➢ भक्ति काल का परिचय दीजिए।

हिन्दी साहित्य के इतिहास में भक्ति काल महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आदिकाल के बाद आये इस युग को 'पूर्व मध्यकाल' भी कहा जाता है। इसकी समयावधि 1375ई० से 1700ई० तक की मानी जाती है। यह हिंदी साहित्य का श्रेष्ठ युग है जिसको जॉर्ज ग्रियर्सन ने स्वर्णकाल, श्यामसुन्दर दास ने स्वर्णयुग, आचार्य राम चंद्र शुक्ल ने भक्ति काल एवं हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लोक जागरण कहा। सम्पूर्ण साहित्य के श्रेष्ठ कवि और उत्तम रचनाएं इसी में प्राप्त होती हैं। दक्षिण में आलवार बंधु नाम से कई प्रख्यात भक्त हुए हैं। इनमें से कई तथाकथित नीची जातियों के भी थे। वे बहुत पढे-लिखे नहीं थे, परंतु अनुभवी थे। आलवारों के पश्चात दक्षिण में आचार्यों की एक परंपरा चली जिसमें रामानुजाचार्य प्रमुख थे। रामानुजाचार्य की परंपरा में रामानंद हुए। उनका व्यक्तित्व असाधारण था। वे उस समय के सबसे बड़े आचार्य थे। उन्होंने भक्ति के क्षेत्र में ऊंच-नीच का भेद तोड़ दिया। सभी जातियों के अधिकारी व्यक्तियों को आपने शिष्य बनाया। उस समय का सूत्र हो गयाः

*जाति-पांति पूछे नहिं कोई।*

*हरि को भजै सो हरि का होई।।*

रामानंद ने विष्णु के अवतार राम की उपासना पर बल दिया। रामानंद ने और उनकी शिष्य-मंडली ने दक्षिण की भक्तिगंगा का उत्तर में प्रवाह किया। समस्त उत्तर-भारत इस पुण्य-प्रवाह में बहने लगा। भारत भर में उस समय पहुंचे हुए संत और महात्मा भक्तों का आविर्भाव हुआ।

महाप्रभु वल्लभाचार्य ने पुष्टि-मार्ग की स्थापना की और विष्णु के कृष्णावतार की उपासना करने का प्रचार किया। उनके द्वारा जिस लीला-गान का उपदेश हुआ उसने देशभर को प्रभावित किया। अष्टछाप के सुप्रसिध्द कवियों ने उनके उपदेशों को मधुर कविता में प्रतिबिंबित किया।

इसके उपरांत माध्व तथा निंबार्क संप्रदायों का भी जन-समाज पर प्रभाव पड़ा है। साधना-क्षेत्र में दो अन्य संप्रदाय भी उस समय विद्यमान थे। नाथों के योग-मार्ग से प्रभावित संत संप्रदाय चला जिसमें प्रमुख व्यक्तित्व संत कबीरदास का है। मुसलमान कवियों का सूफीवाद हिंदुओं के विशिष्टाद्वैतवाद से बहुत भिन्न नहीं है। कुछ भावुक मुसलमान कवियों द्वारा सूफीवाद से रंगी हुई उत्तम रचनाएं लिखी गईं।

## व्याकरण

### कार्यालयीन हिन्दी शब्दावली

Absence : अनुपस्थिति
Acknowledgement : पावती
Administration : प्रशासन
Allowance : भत्ता
Circular : परिपत्र
Eligibility : पात्रता
Enclosure : अनुलग्नक
Minutes : कार्यवृत्त
Memorandum : ज्ञापन
Order : आदेश
Accountant : लेखाकार
Adviser : सलाहकार
Director : निदेशक
Convener : संयोजक
Governor : राज्यपाल
Chancellor : कुलपति
Translator : अनुवादक
Treasurer : कोषाध्यक्ष

### लिंग (Gender)

| **पुरुष लिंग** | **: स्त्री लिंग** |
|---|---|
| हाथी | : हथनी |
| माली | : मालिन |
| कवि | : कवयित्री |
| राजा | : रानी |
| सम्राट | : सम्राज्ञी |
| घोड़ा | : घोड़ी |
| लेखक | : लेखिका |
| लड़का | : लड़की |
| पंडित | : पंडिताइन |
| आयुष्मान | : आयुष्मती |
| इंद्र | : इंद्राणी |
| ऊंट | : ऊंटनी |
| गधा | : गधी |
| गायक | : गायिका |
| गुरु | : गुरुआईन |
| गोरा | : गोरी |
| छात्र | : छात्रा |
| देव | : देवी |
| नर | : मादा |
| नाग | : नगीन |
| नायक | : नायिका |
| स्त्री | : स्त्री |
| प्रिय | : प्रियतमा |
| पुत्र | : पुत्री |
| बंदर | : बंदरिया |
| बलवान | : बलवती |
| मामा | : मामी |
| मोर | : मोरनी |

### वचन

| **एकवचन** | **: बहुवचन** |
|---|---|
| कलम | : कलमें |
| पुस्तक | : पुस्तकें |
| आँख | : आंखें |
| रात | : रातें |
| कविता | : कविताएँ |
| लता | : लताएँ |
| माता | : माताएँ |
| वस्तु | : वस्तुएँ |
| माता | : माताएँ |
| लड़का | : लड़के |
| तोता | : तोते |
| बच्चा | : बच्चे |
| मेला | : मेले |
| घोडा | : घोड़े |
| जूता | : जूते |
| किताब | : किताबे |
| बहन | : बहने |
| रोटी | : रोटियाँ |
| सभा | : सभाएं |
| कथा | : कथाएँ |

माला : मालाएँ
ताला : ताले

## काल (tense)

**काल के भेद :-** काल के तीन भेद होते है।

1. वर्तमान काल
2. भूतकाल
3. भविष्यत् काल

**वर्तमान काल**

क्रिया के जिस रूप से यह पता चले कि काम अभी चल रहा है उसे वर्तमान काल कहते हैं।

**जैसे-**

- वह खेल रहा है।
- राधा सो रही है।
- मैं लिखती हूँ।

**भूतकाल-** क्रिया के जिस रूप से बीते हुए समय का बोध हो उसे भूतकाल कहते हैं।

**जैसे-**

- राम ने पत्र लिखा।
- वह चली गई।

**भविष्यत् काल** – क्रिया के जिस रूप से उसके आने वाले समय का पता चले उसे भविष्यत् काल कहते हैं।

**जैसे-**

- वह पटना नहीं जाएगा।
- कल मोहन बाजार जाएगा।
- हम मैच देखेंगे।

## कारक (Case)

**कारक शब्द का अर्थ होता है** – क्रिया को करने वाला। क्रिया को करने में कोई न कोई अपनी भूमिका निभाता है, उसे कारक कहते है। अथार्त संज्ञा और सर्वनाम का क्रिया के साथ दूसरे शब्दों में संबंध बताने वाले निशानों को कारक कहते है।

**कर्ता कारक :** जो वाक्य में कार्य करता है, उसे कर्ता कहा जाता है। अथार्त वाक्य के जिस रूप से क्रिया को करने वाले का पता चले, उसे कर्ता कहते हैं।

**जैसे** – 1.राम ने रावण को मारा। 2.लड़की स्कूल जाती है।

**कर्म कारक :** जिस संज्ञा या सर्वनाम पर क्रिया का प्रभाव पड़े, उसे कर्म कारक कहते है। इसकी विभक्ति 'को' है। लेकिन कहीं-कहीं पर कर्म का चिन्ह लोप होता है।

**जैसे-** माँ बच्चे को सुला रही है।

इस वाक्य में सुलाने की क्रिया का प्रभाव बच्चे पर पड़ रहा है। इसलिए 'बच्चे को' कर्म कारक है। राम ने रावण को मारा। यहाँ 'रावण को' कर्म है।

बुलाना, सुलाना, कोसना, पुकारना, जमाना, भगाना आदि क्रियाओं के प्रयोग में अगर कर्म संज्ञा हो, तो 'को' विभक्ति जरुर लगती है। जैसे –(i) अध्यापक, छात्र को पीटता है। (ii) सीता फल खाती है। (iii) ममता सितार बजा रही है। (iv) राम ने रावण को मारा।

**करण कारक :** जिस वस्तु की सहायता से या जिसके द्वारा कोई काम किया जाता है, उसे करण कारक कहते है। इसकी विभक्ति 'से' है। 'करण' का अर्थ है 'साधन'। अतः 'से' चिह्न वहीं करणकारक का चिह्न है, जहाँ यह 'साधन' के अर्थ में प्रयुक्त हो।

**जैसे** –

हम आँखों से देखते है।